बाँसुरी नहीं बजती बजता है आदमी

नरेश सक्सेना

साठ बरस पुरानी बात है।

मैं तब मुरैना में पाँचवीं क्लास में पढ़ता था। रोज़ रात को 9-10 बजे कोई बाँसुरी पर *बरसात* फिल्म का एक गीत "बरसात में हमसे मिले तुम सजन तुम से मिले हम" बजाता हुआ निकलता था। मुझे कितना अच्छा लगता था यह बता नहीं सकता। सुनकर एक टीस-सी मन में उठती थी कि काश मैं भी ऐसी बाँसुरी बजा पाता!

एक बार मेले में जब एक बाँसुरीवाला मिला तो मैंने उससे वह बाँसुरी माँगी जो वह खुद बजा रहा था। बड़ी मुश्किल से उसने वह बाँसुरी मुझे दी। मेरे सारे रुपए यानी साढ़े चार रुपए उस पर खर्च हो गए। उन दिनों यह बहुत बड़ी रकम होती थी। मैंने खुद ही उँगलियाँ रखकर उसे बजाने की कोशिश की। लेकिन बार-बार असफल होने के बावजूद कोशिश करता रहा। धीरे-धीरे स्वर निकलने लगे। नवीं क्लास में आते-आते मैं फिल्मी गाने बजाने लगा – तब मेरे पिता ने मेरे बाँसुरी बजाने पर रोक लगा दी। मैं चोरी-छिपे बजाता रहा। बहुत डाँट पड़ती थी। फिर मैं माउथ ऑर्गन भी बजाने लगा। एक बार यदि एक वाद्य बजाना आ जाए तो कई वाद्य बजाने आसान हो जाते हैं।

बाँसुरी वादन का सबसे रोमांचकारी क्षण तब आया जब मुझे मुकेश के साथ कार्यक्रम में हिस्सा लेने के लिए बुलाया गया। तब मैं जबलपुर में इंजीनियरिंग का छात्र था। यह सन् 1960 के आसपास की बात है।

जबलपुर में फिल्मी गाने बाँसुरी पर मुझसे अच्छा कोई नहीं बजा पाता था। मैं कोशिश करता कि ऐसे गाने बजाऊँ जो बाँसुरी पर नहीं बजाए जाते रहे हैं। जैसे, रॉक एन रोल वाले गाने। उन दिनों "लाल-लाल-गाल" और "ईना-मीना-डीका" गाने बहुत लोकप्रिय थे। इन्हें मैं बाँसुरी पर बजाता और माउथ ऑर्गन पर शास्त्रीय संगीत पर आधारित गाने जैसे, फिल्म *बैजू बावरा* का गीत "मोहे भूल गए साँवरिया"।

मुकेश का कार्यक्रम "राष्ट्रीय सुरक्षा फण्ड" के लिए सेना की ओर से आयोजित किया गया था। उसमें दो सौ रुपए से एक हज़ार रुपए तक के टिकिट थे। इतने महँगे टिकिट हम हॉस्टल में रहने वाले लड़के कहाँ से खरीदते। तभी खबर मिली कि कार्यक्रम के बीच में मुकेश को आधे घण्टे का ब्रेक देने के लिए मुझे बुलाया गया है। उस दिन का रोमांच मैं जीवन भर नहीं भूल सकता। रोमांच इसलिए कि जिस वक्त मैंने बाँसुरी बजाना शुरू किया था उस वक्त मुकेश के गीतों को मैं लड़खड़ाते हुए गाने-बजाने की कोशिश करता था। उन दिनों तो यह एक स्वप्न जैसा ही था कि किसी दिन उनके साथ हम बजाएँगे। लेकिन कभी-कभी सपने भी सच हो जाते हैं। बाद में, जब मैंने लघु फिल्में बनाईं, सीरियल बनाए तो उसके बैकग्राउण्ड में (साउण्ड-ट्रैक पर) मैंने खुद ही बाँसुरी बजाई। हालाँकि इस बात का दुख मुझे आज भी है कि कभी भी कायदे से बाँसुरी सीखने का मौका मुझे नहीं मिला।

कुछ वर्ष पहले एक दिन जब मैंने बाँसुरी होठों से लगाई तो वह बजी नहीं। कई बार कोशिश की पर वह नहीं बजी। मुझे लगा कहीं चटक तो नहीं गई। कहीं निशान तो नहीं दिख रहा था। बाहर धूप में जाकर भी देखा तो बाँसुरी ठीक-ठाक निकली। फिर क्यों नहीं बज रही? कुछ समझ में नहीं आ रहा था। अचानक याद आया कि सामने का दाँत तो निकलवा दिया है। एक पहले ही टूट चुका था। इस तरह सामने के दो गायब दाँतों के कारण बाँसुरी नहीं बज रही थी – होठों से ठीक-से फूँक नहीं निकल पा रही थी। उस दिन समझ में आया कि बाँसुरी सिर्फ उँगलियों और होठों से नहीं, बजती। उसे बजाने में दाँत भी काम आते हैं, फेंफड़े भी, गर्दन भी यानी कि पूरा शरीर, पूरी चेतना। हमारी स्मृति, कल्पनाशीलता सभी काम आते हैं। उस दिन समझ में आया कि सिर्फ बाँसुरी नहीं, उसे बजाने वाला भी साथ-साथ बजता है।

हमारे देश में स्व. पन्नालाल घोष और हरिप्रसाद चौरसिया जैसे बहुत बड़े बाँसुरीवादक हुए हैं। बाँसुरी बहुत सस्ता वाद्य है फिर भी कितने कम लोग इसे बजाते हैं। हमारी वर्ण व्यवस्था ने कलाकारों, कारीगरों, कामगारों को बहुत नीचा दर्जा दिया। शहनाई, बाँसुरी और अन्य वाद्य बजाने वालों को बहुत नीची निगाह से देखा जाता था। धातुओं के कारीगर जैसे लुहार, सुनार, बढ़ई आदि को नीची जातियों में शामिल कर दिया गया। इससे भारत के कला कौशल और तकनीकी (Technology) का विकास ही रुक गया। हिन्दी प्रदेशों के सांस्कृतिक पिछड़ेपन के भी यही कारण हैं। हालाँकि हम कृष्ण को पूजते रहे जो बाँसुरी बजाते थे और रासनृत्य करते थे लेकिन हिन्दी प्रदेशों की उच्च जातियों में नृत्य-गायन का निषेध रहा। यानी ठाकुर या ब्राह्मण लोग गाँवों में कभी नहीं नाचते-गाते। होली पर भी धोबी, कुम्हार जैसी छोटी कहीं जाने वाली जातियाँ ही नाचती-गाती हैं। जो जातियाँ कला कौशल में, पिछड़ी रहेंगी वे प्रगति कैसे करेंगी? नीची कही जाने वाली जातियों को तो बहुत पहले पढ़ने-लिखने का भी अधिकार नहीं था।

पिछले वर्ष फिल्म इंस्टीट्यूट पूना में मुझे व्याख्यान के लिए बुलाया गया। छात्रों ने मुझसे पूछा कि आपने फिल्म बनाना कैसे सीखा? मैंने कहा, "क्योंकि मैंने कविता सीखी। इससे फिल्म कला मेरे लिए आसान हो गई।" तब उन्होंने पूछा, "अपने कविता कैसे सीखी?" तो मैंने कहा, "मैं बाँसुरी बजाता था इसलिए कविता मेरे लिए आसान हो गई। क्योंकि उसमें भी मैं लय और संगीतात्मक ध्वनियों का प्रयोग करता हूँ।" बाँसुरी मैंने कैसे सीखी यह तो आप जानते ही हैं यानी बजाते-बजाते और डाँट खाते हुए।

चित्रः कनक